आर.सी.ई.पी. (RCEP) का जमीनी प्रतिरोध: भारतीय आंदोलन ने दिखाया रास्ता

लेखक : ग्रेन (GRAIN) और भारतीय किसान आंदोलनों की समन्वय समिति (Indian Coordination Committee of Farmers Movement)

मुक्त व्यापार समझौतों के खिलाफ हो रहे आंदोलनों के इतिहास में 4 नवंबर 2019 का दिन हमेशा याद रखा जाएगा। इसी दिन किसानों, मजदूर संघ और ग्रामीण समुदायों के दबाव में आकर भारत की केंद्र सरकार ने खुद को ''क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी'' (आर.सी.ई.पी.) से बाहर कर लिया था। आरसीईपी का इरादा विश्व का सबसे बड़ा मुक्त व्यापार क्षेत्र बनने का था। भारत ने यह घोषणा आसियान (ASEAN) शिखर वार्ता के दौरान बैंकॉक में की। इस घोषणा का इस पूरे क्षेत्र में होने वाले मुक्त व्यापार वार्ताओं के ऊपर सीधा असर पड़ेगा। एशियाई मार्केट के एकीकरण में रोक लगेगी। ज्ञात रहे कि यह एक ऐसा प्रोजेक्ट है जिससे केवल कृषि उद्योग और बहुराष्ट्रीय कंपनियों को ही फायदा पहुंचने वाला था।

हालांकि, जापान, न्यूज़ीलैंड और ऑस्ट्रेलिया जैसे देश चाहते हैं कि भारत वापस इस समझौते में शामिल हो जाए। वे कामयाब हो पाएंगे या नहीं यह देखना बाकी है। पर अभी के लिए तो दिल्ली के इस निर्णय से करोड़ों भारतीए छोटे खाद्य उत्पादक और ग्रामीण मजदूरों को अपार राहत पहुंची है।

तो ऐसा क्या हुआ कि एक नव–उदारवादी, पूंजीवादी सरकार जिसमें साफ सत्तावादी लक्षण दिखते हैं, वह किसानों और मजदूरों के दबाव के आगे झुक गई। इसे समझने के लिए हमें पिछले पूरे एक दशक की घटनाओं को समझना होगा।

प्रतिरोध की उत्पत्ति

वैश्विक वित्तीय संकट के बाद, पूंजीवाद और भूमंडलीकरण का प्रतिरोध धीरे–धीरे पूरे विश्व में फैल रहा था। कई औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं के बाजार में या तो संतृप्ति (saturation) आ गया था या मांग (demand) में लगातार गिरावट आ रही थी। ऐसे में वैश्विक पूंजी के प्रवर्तकों के लिए नए इलाकों की खोज के अलावा और कोई रास्ता नहीं बचा था। एशिया, जहां विश्व की 60 प्रतिशत आबादी रहती है, साफ तौर पर एक ऐसा बाजार था जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। एशियाई मार्केट का एकीकरण एक आसान विकल्प था, जहां बड़ी आसानी से विकास मिल सकता था। एशिया के अलावा कहीं और ऐसा विकास प्राप्त करना बड़ा मुश्किल था।

''क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी (RCEP)'' – इसके नाम से ही साफ हो जाता है कि यह अपने उदार नियमों के जरिए एक व्यापक क्षेत्र को प्रभावित करता है, जैसे माल एवं सेवाओं का व्यापार, निवेश, आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग, बौद्धिक संपदा, प्रतिस्पर्धा नीति एवं विवाद निपटान, इत्यादि। ये महाकाय मुक्त व्यापार समझौता करीब–करीब सभी क्षेत्रों में प्रशुल्क (Tariff or Import Duty) खत्म कर देगा। ये डब्ल्यू. टी.ओ. के अंतर्गत स्वीकार की गई बाध्यताओं या जापान, दक्षिण कोरिया, आसियान, सिंगापुर, मलेशिया और थाईलैंड के साथ हुई मुक्त व्यापार समझौतों की बाध्यताओं से कई गुना अधिक है। भारत की आबादी 130 करोड़ है। यह आरसीईपी के देशों को एक बहुत बड़ा बाजार उपलब्ध करा सकता है। इसी वजह से भारत आरसीईपी में सबसे महत्वपूर्ण देशों में से एक है।

1991 में जब से भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था के उदारीकरण की शुरुआत की है, तब से सेवा क्षेत्र में भारी उछाल देखा गया है। इससे देश में एक नया धनी और उपभोक्तावादी मध्यमवर्ग उभरा है। दूसरी तरफ, ग्रामीण इलाकों में रह रहे अधिकांश लोगों की मुश्किलें दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। किसान, खेतिहर मजदूर या बटाईदार बड़ी मुश्किल से अपना गुजर–बसर कर पा रहे हैं। भारतीय कृषि क्षेत्र में उदारीकरण का प्रभाव भयंकर रहा है। करीब 50 प्रतिशत ग्रामीण परिवार कर्ज में डूबे हुए हैं। अंदाजन 75 प्रतिशत लोगों की मासिक कमाई 10,000 रुपये (150 अमरीकी डॉलर) से भी कम है।

करीब तीन दशकों से भारत में किसान सड़क पर उतकर आंदोलन कर रहे हैं और सरकार से न्यूनतम समर्थन मूल्य बढ़ाने की मांग कर रहे हैं। पर कभी भी इन मांगों को माना नहीं गया। ऐसा इसलिए है क्योंकि 1990 के दशक से लेकर अभी तक जितने भी अलग–अलग व्यापार नियम और व्यवस्थाएं बनी हैं वे हमारी सरकार को ऐसा करने से रोकती हैं। इसीलिए भारत में जहां एक तरफ उदारीकरण ने कुछ लोगों की जिंदगी को बेहतर बनाया है, वहीं दूसरी तरफ इसने कई लोगों को नजरअंदाज और उपेक्षित भी किया है – विशेषतः ग्रामीण मजदूर और किसानों को।

पिछले तीन दशकों से ही ''भारतीय किसान आंदोलनों की समन्वय समिति'' (Indian Coordination Committee of Farmers Movement - ICCFM) के नेतृत्व में कई छोटे–बड़े किसान संगठन लगातार यह मांग कर रहे हैं कि भारत सरकार 'कृषि' को डब्ल्यूटीओ और तमाम मुक्त व्यापार समझौतों से बाहर रखे।[1] इसीलिए जब आरसीईपी समझौता वार्ताओं की शुरुआत हुई तो किसान आंदोलनों की समन्वय समिति ने सबसे पहले इस बात का विरोध किया। इनका कहना था कि इस महाकाय समझौते का भारत के कृषि क्षेत्र में बहुत बुरा प्रभाव पड़ने वाला है। 2014 की शुरुआत में ही यह नारा दिया गया – ''भारत को आरसीईपी छोड़ना होगा''। 1 दिसंबर 2014 को दिल्ली के समीप ग्रेटर नोएडा में आरसीईपी की छठवीं शिखर वार्ता हो रही थी। समन्वय समिति के नेतृत्व में एक विशाल विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया गया। इसमें 'दिल्ली हॉकर्स फेडरेशन' और 'फोरम अगेंस्ट एफटीए' के सदस्य भी शामिल हुए।[2]

भारतीय किसान आंदोलनों की समन्वय समिति का विश्लेषण बहुत सरल था – *''कुछ आसियान सदस्य और आरसीईपी में शामिल कुछ देश अलग–अलग कृषि उत्पादों (गेहूं, दुग्ध उत्पाद, चावल, खाद्य तेल, रबड़ इत्यादि) के निर्यात में विश्व में सबसे आगे हैं। उदाहरण के लिए ऑस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड भारत में अपना बाजार फैलाने के लिए एड़ी–चोटी का जोर लगा रहे हैं, क्योंकि उनके पास गेहूं और दुग्ध उत्पादों का अतिरिक्त उत्पादन होता है जिसे वे भारत में बेचना चाहते हैं। आरसीईपी में प्रशुल्क दर को कम करने की शर्त है। अगर भारत ऐसा करता है तो हमारे गेहूं उत्पादक और डेयरी किसान गंभीर रूप से प्रभावित होंगे।''* [3]

उस दिन का विशाल प्रदर्शन इतना प्रभावशाली था कि उसके बाद देश भर में कई जगहों पर विकेंद्रीकृत संघर्ष शुरू हो गए। ये स्थानीय संघर्ष विभिन्न आंदोलनों और मजदूर संघों के नेतृत्व में पूरे देश में फैल गए। फोरम अगेंस्ट एफटीए (Forum Against FTAs) – जो स्वाधीन शोधकर्ताओं और प्रगतिशील गैर–सरकारी शोध निकायों का एक गठबंधन है – ने इस समझौता वार्ता के विभिन्न तकनीकी पक्षों का मूल्यांकन और विश्लेषण किया। देश भर के आंदोलनों और मजदूर संघों को इन्होंने महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराई और उन्हें शिक्षित किया। आरसीईपी की प्रक्रिया को बड़े गोपनीय तरीके से चलाया जा रहा

---

[1] भारतीय किसान आंदोलनों की समन्वय समिति (ICCFM) में ला विया कम्पेसिना (*La Via Campesina*) के भारत के सदस्य शामिल हैं जैसे भारतीय किसान यूनियन (BKU) और कर्नाटक राज्य रैयत संघ (KRRS), और कई अन्य दक्षिण भारतीय किसान यूनियन जैसे थामिज़ागा विवासाइगल संगम (तमिलनाडु) उज़ावर उलईप्पलर काचि (तमिलनाडु), उज़ावर पेरियक्कम (तमिलनाडु), काचि सरपर्त्रा थामिज़ागा विवासाइगल संगम (तमिलनाडु), कोंगुनाडु विवासाइगल संगम (तमिलनाडु), केरल नारियल किसान संघ और आदिवासी गोथरा महासभा (केरदला)।

[2] फोरम अगेंस्ट एफटीए (जिसका नाम 2019 में बदलकर फोरम फॉर ट्रड जस्टिस हो गया है) भारत की नागर समाज संगठन, ट्रेड यूनियन, किसान समूह, और सम्बद्ध नागरिकों का एक नेटवर्क है।

[3] ICCFM द्वारा भारत सरकार को 2014 में सौंपे गए ज्ञापन के अनुसार

था। पर कुछ दस्तावेज कहीं से हाथ लग गए। इन्ही लीक हुए दस्तावेजों की मदद से इन शोधकर्ताओं ने आरसीईपी के प्रभावों का विश्लेषण किया गया।

इसी बीच किसान आंदोलन जैसे भारतीय किसान आंदोलनों की समन्वय समिति, राष्ट्रीय किसान महासंघ, अखिल भारतीय किसान संघर्ष समन्वय समिति ने आगे बढ़कर जन आंदोलन, प्रेस वार्ता और खुले पत्रों द्वारा सरकार पर दबाव बढ़ा दिया। उनका आरोप था कि सरकार ने इस समझौते के बारे में न ही संसद में चर्चा की है और न ही राज्य विधायिका के साथ कोई परामर्श किया है। भारत के संविधान के अनुसार 'कृषि' राज्य का विषय है। सरकार बिना किसी परामर्श के आगे बढ़ रही थी जबकि उसे अच्छे से पता था कि आरसीईपी के कारण भारत के कृषि क्षेत्र का और ज्यादा उदारीकरण हो जाएगा।

जैसा सभी मुक्त व्यापार समझौतों में होता आया है इस बार भी सरकार ने समझौते के दस्तावेजों को गोपनीय रखा। समझौते के फायदे और नुकसान से संबंधित किसी भी दस्तावेज को प्रकाशित नहीं किया गया। सरकार ने ऐसा कोई अध्ययन भी नहीं किया जिससे पता लगाया जा सके कि आरसीईपा से किसे फायदा होने वाला है और कैसे। सार्वजनिक रूप से उपलब्ध दस्तावेजों से पता चलता है कि मौजूदा मुक्त व्यापार समझौते जिन्हें भारत ने द्विपक्षीय रूप से हस्ताक्षर किए हैं या अन्य एशियाई देशों के साथ जो समझौते हुए हैं, उनसे हमारे देश को अबतक ज्यादा फायदा नहीं हुआ। इसके विपरीत इन समझौतों से भारत को भारी व्यापार घाटा और नुकसान का सामना करना पड़ा है जबकि करीब–करीब सभी देशों को, विशेष रूप से चीन को केवल फायदा हुआ है।[4] मुक्त व्यापार समझौते के सभी सदस्यों के साथ बढ़ते जा रहे व्यापार में घाटे के कारण 'भारतीय वाणिज्य और उद्योग महासंघ' (FICCI) जैसी शीर्ष उद्योग समूह भी नए व्यापार समझौतों के ऊपर रोक लगाने (मोरटोरियम) की मांग कर चुके हैं।

यह स्पष्ट था कि आरसीईपी से मामला और भी खराब हो जाएगा, केवल किसान और मजदूरों के लिए ही नहीं पर सामान्य रूप से भारतीय उद्योगों के लिए भी।

राष्ट्रीय सीमाओं से परे एकजुटता

2016 में कई आरसीईपी सदस्यों ने – जैसे ऑस्ट्रेलिया, ब्रुनेई, न्यूज़ीलैंड, जापान, मलेशिया, सिंगापुर और वियतनाम ने 'ट्रांस–पेसिफिक पार्टनरशिप' (टी.पी.पी.) नामक एक व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किया था। ये सभी देश (आरसीईपी के भी सदस्य हैं) चाहते थे कि आरसीईपी को भी टीपीपी की ही तरह बनाया जाए। जिस कारण विभिन्न एशियाई देशों में जो नागरिक समाज संगठन टीपीपी और आरसीईपी का विरोध कर रहे थे वे सभी एक साथ आ गए। उन्होंने आरसीईपी के खिलाफ अपनी राष्ट्रीय सीमाओं से परे एक अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन बना डाला।

इस व्यापक गठबंधन के बनने से आरसीईपी के सदस्य देशों में उसका विरोध कर रहे समूहों के बीच आदान–प्रदान बढ़ गया और जानकारी का प्रचार होने लगा। इससे एक साझा आंदोलन खड़ा करने में आसानी हुई और सही मायनों में जन दबाव तैयार हो पाया, जिसमें महिलाएं, मछुआरे, किसान, रेहड़ी–पटरी वाले, एच.आई.वी–एड्स से ग्रसित लोग, सेवा उद्योग कर्मचारी, इत्यादि सभी क्षेत्र बढ़–चढ़कर आगे आए। इससे अलग–अलग देशों की सरकारों पर एक साथ ये दबाव बना कि वे वार्ताकारों और नागर समाज के बीच बातचीत आयोजित करे। पर अभी भी समझौते के सही प्रारूपों के लिए कार्यकर्ताओं को लीक हुए दस्तावेजों से ही काम चलाना पड़ रहा था।[5]

---

[4] Dr. V.K. Saraswat et al, "A note on free trade agreement and their costs", National Institute for Transforming India, 29 June 2018, https://niti.gov.in/writereaddata/files/document_publication/FTA-NITIFINAL.pdf

[5] See bilaterals.org, https://bilaterals.org/rcep-leaks

निवेश के ऊपर एक लीक हुए दस्तावेज से पता चला कि किस प्रकार उसका सीधा संबंध बौद्धिक सम्पदा से है। बाद में समूहों को यह भी पता चला कि 'निवेशक–राष्ट्र विवाद निपटान (Investor State Dispute Settlement - ISDS)' भी इस समझौते का हिस्सा है। ISDS प्रावधान बड़ी महाकाय कंपनियों को सरकारों से मुआवजा प्राप्त करने का अधिकार प्रदान करता है। गठबंधन ने ISDS के खिलाफ एक आंदोलन छेड़ दिया जिससे काफी अच्छा असर पड़ा। सितम्बर 2019 में मलेशिया की अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और उद्योग मंत्री ने यह घोषणा की, कि ISDS को आरसीईपी से हटा दिया जाएगा।[6] बड़ी कंपनियों के लिए यह बड़ा झटका था। भारत को इससे बड़ी राहत मिली क्योंकि इस वक्त आरसीईपी देशों के ऊपर जितने ISDS मामले चल रहे हैं उनमें से 40 प्रतिशत केवल भारत के ही खिलाफ हैं। अभी भी 9 ISDS मामले लंबित हैं जिसका मान अंदाजन 580 करोड़ अमरीकी डॉलर है। दरअसल, 1994 से लेकर अभी तक निवेशकों ने भारत के ऊपर करीब 1230 करोड़ अमरीकी डॉलर का दावा किया है – इस मामले में भारत सबसे आगे है।[7]

कई सालों तक लगातार दबाव बनाने के बाद जन आंदोलन को एक और बड़ी सफलता तब मिली जब आरसीईपी के सदस्य देशों ने ये तय किया कि वे 'पौधों की नई किस्मों के संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय यूनियन' (UPOV) में शामिल नहीं होंगे और न ही अपने राष्ट्रीय कानूनों में यूपोव (UPOV) के प्रावधानों को शामिल करेंगे। ''यूपोव' (UPOV) अर्थात् 'पौधों की नई किस्मों के संरक्षण के लिए अंतरराष्ट्रीय यूनियन''। यह एक तरह की पेटेंट व्यवस्था है जिसे यूरोप में पौधों की नई किस्मों के संरक्षण के लिए करीब 60 साल पहले तैयार किया गया था। यूपोव के तहत पौध–प्रजनकों (plant breeders) को 20–25 वर्षों के लिए उनके द्वारा तैयार बीजों के ऊपर एकाधिकार प्रदान किया जाता है। यूपोव बीज कंपनियों को फायदा पहुँचाने के लिए किसानों के बीज बचाने के अधिकार को प्रतिबंधित करता है।

फरवरी 2019 में भारत के नागर समाज समूह और भारतीय किसान आन्दोलनों की समन्वय समिति ने मलेशियाई, इंडोनेशियाई, और फिलिपिनो समूहों के साथ मिलकर अपनी–अपनी सरकारों को खुला पत्र लिख कर कहा कि आरसीईपी समझौतों में यूपोव में शामिल होने (या क्रियान्वित करने) की प्रतिबद्धता को न रखा जाय, क्योंकि इससे किसानों के अधिकारों का हनन होता है। फलस्वरूप, थाईलैंड के मुख्य वार्ताकार ने 13 जून 2019 को एक बैठक में नागर समाज समूहों को ये बताया कि आरसीईपी में से यूपोव को हटा दिया गया है। बाद में अनौपचारिक रूप से अन्य सरकारों ने भी इस बात की पुष्टि की।

इसी बीच सड़कों पर आंदोलन और तेज हो गए।

आरसीईपी के खिलाफ संघर्ष में एक महत्वपूर्ण क्षण जुलाई 2017 में आया जब भारत में समझौते के 19वें दौर का आयोजन हैदराबाद में हो रहा था। दक्षिण भारत के विभिन्न क्षेत्रों से अनेकों जन आन्दोलन 1–2 अप्रैल 2017 को बेंगलुरु में एकत्रित हुए। यहाँ उन्होंने आरसीईपी के विरोध की एक विस्तृत रणनीति बनाई और एक व्यापक गठबंधन तैयार किया। उन्होंने आह्वान किया – ''भारत को आरसीईपी छोड़ना होगा''।[8]

21 से 26 जुलाई 2017 को हैदराबाद में क्षेत्रीय व्यापार समझौते के खिलाफ विशाल जन समुदाय ने प्रदर्शन किया । इसका नेतृत्व ''एफटीए और आरसीईपी के खिलाफ जन प्रतिरोध'' (People's Resistance Forum against FTAs and RCEP) ने किया। इसमें बड़ी संख्या में जन संगठन शामिल हुए जो विभिन्न

---

[6] Rahimi Yunus, "RCEP talks to proceed without ISDS", The Malaysian Reserve, 13 September 2019, https://themalaysianreserve.com/2019/09/13/rcep-talks-to-proceed-without-isds/

[7] Cecilia Olivet et al, "The hidden costs of RCEP and corporate trade deal in Asia", Friends of the Earth International, Transnational Institute, Indonesia for Global Justice, Focus on the Global South, and Paung Ku, December 2016, https://www.tni.org/files/publication-downloads/rcep-booklet.pdf

[8] इसके आयोजन में कर्नाटक राज्य रैयत संघ, ला विया कंपेसिना के भारत के सदस्य, आईटी फॉर चेंज, फोरम अगेंस्ट एफटीए, और आई.एस.आई–बंगलुरू के अन्य स्थानीय समूह शामिल थे।

संगठनों और समुदायों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। किसान, कृषि मजदूर, पशुपालक, दुग्ध किसान, बागवानी मजदूर, महिला किसान, मछुआरे, ट्रेड यूनियन, औद्योगिक और खदान मजदूर, रेहड़ी–पटरी वाले, असंगठित मजदूर, बीमा एवं बैंक कर्मचारी, जन सेवा कर्मचारी, छात्र, आईटी इंजीनियर, विज्ञान अध्यापक, वकील, पर्यावरणीय एवं सामाजिक कार्यकर्ता, एचआईवी–पोज़िटिव लोग, महिला संगठन, दलित, आदिवासी, और डिनोटिफाइड आदिवासी (denotified tribes)– सभी उसमें शामिल हुए।

विभिन्न क्षेत्र के लोगों के बीच जो एकजुटता उभर कर आई वह अपने साथ ग्रामीण क्षेत्रों में आरसीईपी से होने वाले खतरों की खबर भी साथ लेकर आई। इसके पहले शायद ही कभी किसी तकनिकी मुद्दे के ऊपर पूरा ग्रामीण समाज इतने सक्रीय रूप से जुड़ा होगा। मुक्त व्यापार समझौते के खिलाफ आंदोलन चलाने में सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि इसका प्रभाव और परिणाम तुरन्त या निकट भविष्य में नहीं दिखते। केवल लम्बे समय में ही इसका असर देखा जा सकता है जब ये पूरे ग्रामीण जीवन को तहस–नहस कर चुके होते हैं। इसलिए किसी ऐसे मुद्दे के ऊपर लोगों को संगठित करना जिसका परिणाम शायद एक दशक के पहले न देखने को मिले – बड़ा कठिन होता है।

लेकिन इस बार ऐसा नहीं हुआ। इस बार विभिन्न सार्वजनिक और घरेलु निजी क्षेत्रों के समूहों और आंदोलनों ने यूनियनों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर एक आवाज में आरसीईपी का विरोध किया।

मार्च 2019 में भारतीय किसान आंदोलनों की समन्वय समिति ने दिल्ली में एक परामर्श का आयोजन किया जिसमें इस बात पर चर्चा की गई कि कैसे आरसीईपी के खिलाफ आंदोलन को स्थानीय प्रशासनिक स्तर (पंचायत और ब्लॉक) तक ले जाया जाए और स्थानीय भाषा में आंदोलन की सामग्रियों का वितरण करके जागरूकता अभियान चलाया जाए। पूरे साल भर हर महीने देश भर में अनेकों आन्दोलनों ने विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया। 24 अक्टूबर 2019 को भारतीय किसान आन्दोलनों की समन्वय समिति ने देशव्यापी प्रदर्शन का आयोजन किया। लाखों लोगों ने सड़क पर उतरकर यह मांग की – 'भारत को आरसीईपी छोड़ना होगा'। इस आंदोलन की नारों में यह कहा गया था – *''केवल किसान ही अपने अस्तित्व का खतरा नहीं झेल रहे हैं – बल्कि पूरे देश की खाद्य सम्प्रभुता दाव पर लगी हुई है। हमें सभी मुक्त व्यापार समझौतों से 'कृषि' को बाहर रखकर अपने आप को बचाना होगा। हमें निश्चित रूप से आरसीईपी को रोकना होगा।''*

राज्य सरकारों से घरेलु उद्योगों तक : आरसीईपी के खिलाफ भारत में विरोध का विस्तार

किसानों को भारतीय उद्योग से भरपूर सहयोग मिला क्योंकि चीन के होने के कारण कई व्यापार संघ आरसीईपी के बारे में अनिश्चित थे। इनमें से कई ने तो खुलकर विरोध भी किया और भारतीय सरकार से आग्रह किया कि उनके क्षेत्र को या तो बाहर रखा जाए या फिर चीनी आयात से बचाने के लिए उनके उत्पादों को अपवर्जन सूची (exclusion list) में डाला जाए। विशेषरूप से स्टील, प्लास्टिक, तांबा, अल्युमिनियम, मशीन के औजार, कागज, ऑटोमोबाइल, रसायन, और पेट्रो–रसायन इत्यादि के क्षेत्र में।[9] भारतीय उद्योग परिसंघ (Confedration of Indian Industries) के अनुसार रोजगार, नई खोज (innovation) और घरेलू उद्योग के लिए क्षमता–निर्माण के लिए तभी फायदेमंद है जब आरसीईपी से बाहर रहा जाए।[10]

[9] "Exporters, industry laud India's decision to pull out of RCEP", The Hindu, 5 November 2019, https://www.thehindu.com/business/exporters-industry-laud-indias-decision-to-pull-out-ofrcep/article29891376.ece

[10] Samrat Sharma, "These states are happiest with India pulling out of RCEP; industry leaders have this to say", Financial Express, 7 November 2019, https://www.financialexpress.com/economy/these-statesare-happiest-with-india-pulling-out-of-rcep-industry-leaders-have-this-to-say/1757142/

डेयरी क्षेत्र, खासतौर पर अमुल जैसी किसान सहकारी समितियों ने तो पूरी तरह से आरसीईपी का विरोध करना शुरू कर दिया था। उन्हें डर था कि न्यूज़ीलैंड और ऑस्ट्रेलिया की शक्तिशाली कंपनियों का मुकाबला वे नहीं कर पाएंगे और वो भारतीय डेयरी के लिए खतरनाक होगा। सरकार के भीतर भी कई मंत्री इन डेयरी सहकारी समितियों के पक्ष में आवाज उठा रहे थे।

केरल की राज्य सरकार ने तो यहां तक की राज्य विधायिका में आरसीईपी के खिलाफ एक प्रस्ताव ही पारित कर दिया था। पहले भी श्रीलंका और आसियान देशों के साथ हुए मुक्त व्यापार समझौतों के कारण केरल भारी नुकसान उठा चुका था, खासतौर पर बागवानी फसलों के क्षेत्र में।

किसानों और मजदूरों के अंदर इस गुस्से और रोष को भांप कर कांग्रेस सहित करीब–करीब सभी राजनीतिक पार्टियों ने आरसीईपी का जोरदार विरोध किया। विडम्बना की बात तो यह है कि आरसीईपी वार्ताओं की शुरूवात भी इसी कांग्रेस पार्टी ने ही 2012 में की थी जब वह सरकार का हिस्सा थी।

भारत के मुख्यधारा और प्रगतिशील मीडिया ने भी इन जनसरोकारों को सामने लाने में एक प्रभावी और रचनात्मक भूमिका निभाई। इसने मौजूदा मुक्त व्यापार समझौतों से हो रहे दुष्प्रभावों को उजागर किया, जो भारत की अर्थव्यवस्था के लिए खतरनाक साबित हो रहा था, विशेषरूप से कृषि और छोटे उद्यमों के लिए। सोशल मीडिया में भी, खासतौर पर ट्वीटर, फेसबुक, या वाट्सएप पर, युवा किसान काफी सक्रिय थे। इन्होंने आरसीईपी के बारे में जानकारियों का काफी प्रचार–प्रसार किया। लिखित जानकारी के साथ–साथ स्थानीय भाषा में छोटे–छोटे वीडियो की मदद से जागरुकता बढ़ाई गई जिससे ग्रामीण समुदाय लामबंद हो सका।

जनप्रतिरोध के निर्माण में एक सबक

आरसीईपी के खिलाफ जमीनी प्रतिरोध इसीलिए सफल हो पाया क्योंकि प्रत्येक प्रभावित समूहों को यह पता था कि इस व्यापार समझौते से क्या नुकसान होने वाला है। कई विभाजनों के बावजूद, भारत के लोगों ने एक साथ मिलकर इस समझौते का प्रतिरोध किया। प्रत्येक क्षेत्र ने अपनी भूमिका बखूबी निभाई। भारी संख्या में लोगों को राज्य की राजधानी और जिला मुख्यालय के स्तर पर लामबंद किया गया। इससे साफ हो गया कि आरसीईपी के खिलाफ लोगों में गुस्सा काफी ज्यादा है जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इससे सत्तारूढ़ पार्टी को राजनीतिक आघात भी पहुंच सकता है।

अंत में देश के प्रधान मंत्री को भी पीछे हटना पड़ा।

''न ही गांधीजी का तलिसमान और न मेरा अपना विवेक आरसीईपी में शामिल होने की इजाजत देता है'', प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने आरसीईपी से बाहर निकलने के घोषणा करते हुए कहा।[11]

यह संभव है कि निकट भविष्य में आरसीईपी के सदस्य देश भारत के प्रमुख मुद्दों को मानकर उसे वापस समझौता वार्ता में शामिल होने के लिए दबाव डालने की कोशिश करें। परन्तु किसान आंदोलनों और मजदूर यूनियनों के 6 साल लम्बे और अनथक प्रदर्शन के बाद अब ग्रामीण भारत को हल्के में नहीं लिया जा सकता है। भारत के वार्ताकार इस बात को भुलाने की गलती नहीं कर सकते।

———————————————

[11] "Neither Talisman of Gandhiji nor my own conscience permit to join RCEP: PM Modi", The Statesman, 5 November 2019, https://www.thestatesman.com/india/neither-talisman-of-gandhiji-nor-my-own-conscience-permit-to-join-rcep-pm-modi-1502817753.html